मुख्य बिंदु

क्या जीवन सच में दुख है?

प्रश्न : जीवन में दुख है, बहुत दुख है। यह तो हमें कभी-कभी दिखता है, लेकिन यह हमें कभी नहीं दिखता कि जीवन ही दुख है। कहीं बुद्धपुरुष कुछ अतिशयोक्ति तो नहीं करते हैं?

अतिशयोक्ति तो मूर्च्छा में ही हो सकती है। अतिशयोक्ति तो तभी हो सकती है जब तक मन अति करने में समर्थ है। जो मन के पार हो गया, वहां अतिशयोक्ति नहीं हो सकती। वहां जो जैसा है, जो है, वैसा ही कहा जाता है। तो यह सोचने के बजाय कि बुद्धपुरुष अतिशयोक्ति तो नहीं करते, यही सोचना कि हमारे सोचने-समझने में कहीं भ्रांति होगी।

ठीक पूछा है, 'जीवन में दुख है और कभी-कभी यह भी लगता है कि बहुत दुख है, मगर ऐसा कभी नहीं लगता कि जीवन ही दुख है।'

यह बात सच है। ऐसा ही लग जाए तो तुम्हारे जीवन में क्रांति घट जाए। उसी लगने से तो अंगारा पड़ता है, पहली आग लगती। जीवन में दुख है, बहुत दुख है, लेकिन एक आशा बनी रहती है कि आज है, कल सब ठीक हो जाएगा। अभी है, सदा थोड़े ही रहेगा। थोड़ी देर और है, गुजार लो, अच्छी घड़ी आती ही होगी। कभी तो सुख होगा। आशा के कारण, जीवन ही दुख है, ऐसा नहीं लग पाता। आशा बचाए रखती है।

आशा बड़ा संरक्षण देती है जीवन को। अनुभव तो कहता है, दुख ही दुख है। आशा कहती है, ठहरो, इतने जल्दी निर्णय मत लो, अभी तो जीवन बाकी है। आज तक नहीं हुआ तो ऐसा थोड़े ही है कि कल भी नहीं होगा। अब तक असफलता मिली तो कल सफलता मिलेगी। देखो, मोहम्मद गजनी आया, सत्रह दफे हार गया, अठारहवीं दफे जीत गया। आदमी हार जाता है; हिम्मत रखो, धीरज रखो, लड़ते रहो, जूझते रहो; आज हारे, कल जीतोगे; जीत भी होती है, घबड़ाओ मत। आशा खींचे लिए जाती है। और आशा हमारी सदा अनुभव पर जीत जाती है। यही हमारा दुख है, यही हमारी पीड़ा है, यही हमारा उपद्रव है, यही हमारी मूर्च्छा है।

मुल्ला नसरुद्दीन पत्नी से परेशान था। कितनी बार नहीं सोचा कि यह मर जाए। बहुत कम

पति होंगे जो नहीं सोचते। पत्नियां शायद इतना साफ-साफ नहीं भी सोचतीं। सोचती तो वे भी हैं, उनका सोचना जरा धुंधला-धुंधला होता है। कौन नहीं सोचता, संग-साथ भारी पड़ने लगता है। तो मुल्ला कई बार सोच चुका, कई बार तो योजना भी बना लेता था कि मार ही डालूं, लेकिन फिर डर लगता कि अदालत, यह, वह, झंझट में पड़ूंगा।

फिर पत्नी मर भी गयी। संयोग की बात। तो पत्नी के मरने पर उसने मित्रों से घोषणा की कि अब कभी दुबारा विवाह न करूंगा। लेकिन तीन महीने बाद वह फिर लड़की की तलाश करने लगा। तो मित्रों ने कहा, पागल हुए हो, भूल गए, तीन महीने पहले क्या कहा था? उसने कहा, छोड़ो जी, जाने भी दो, आशा अनुभव पर जीत रही है। सभी स्त्रियां थोड़े ही वैसी होंगी। एक से गड़बड़ हो गयी तो सभी से थोड़े ही गड़बड़ हो जाएगी। बुरी स्त्रियां होती हैं, अच्छी स्त्रियां भी होती हैं। एक बार भूल-चूक में पड़ गए थे, अब दुबारा कदम सम्हालकर रखेंगे।

ऐसे आशा समझाए चली जाती है। दुबारा भी वही होगा। दूसरी स्त्री से भी वही होगा। दूसरे पति से भी वही होगा। इस जन्म में जो हुआ, अगले जन्म में भी वही होगा। लेकिन मन कहेगा, कोई तो रास्ता होगा, कहीं तो उपाय होगा निकल जाने का! अनुभव है अतीत में और आशा है भविष्य में। भविष्य की आशा अतीत के अनुभव पर जीतती चली जाती है और संरक्षित करती रहती है। इसलिए जीवन ही दुख है, ऐसा तुम्हें दिखायी नहीं पड़ता।

अगर ठीक से देखोगे, तो बुद्ध ने जो कहा है, वह अतिशयोक्ति नहीं, सत्य का सीधा-सीधा निरूपण है।

यों तो सारा शहर पड़ा है
पर रहने की जगह नहीं है
नाप रहे नभ की सीमाएं
किंतु राह का पता नहीं है
मंसूबे तो हिमगिरि जैसे
पर कणभर भी तथा नहीं है
कैसे मंजिल पाए कोई
सीमांतों तक जाए कोई
राशि-राशि किरणें बिखरी पर
दूर-दूर तक सुबह नहीं है
धुरीहीन सब घूम रहे हैं
केवल चलते ही रहना है
काल-सरित की प्रखर धार में
पराधीन परवश बहना है
कैसे पांव टिकाए कोई
उद्धत जलधि झुकाए कोई
लहरों के अंबार लगे हैं
पर तिरने की सतह नहीं है
जीवन के क्षणभंगुर सपने
सजने के पहले ही टूटे
जो भी चले सहारा देने
वे मनमोहक आंचल छूटे
कैसे मन समझाए कोई
सांसों को सुलझाए कोई
यहां मौत के लाख बहाने
पर जीने की वजह नहीं है
यों तो सारा शहर पड़ा है
पर रहने की जगह नहीं है

ठीक से देखोगे, आशा को हटाकर देखोगे, तो यहां रात ही रात है। दूर-दूर तक सुबह नहीं है। ठीक से देखोगे तो पाओगे, यहां डूबने के सिवाय कोई उपाय नहीं है, तिरने को कोई जगह नहीं है।

यहां मौत के लाख बहाने
पर जीने की वजह नहीं है।

हम डरते हैं, ऐसा देखने से भी हमारा प्राण कांपने लगता है, पैर के नीचे की जमीन खिसकने लगती है। हम भयभीत होते हैं कि अगर ऐसा दिखायी पड़ गया, तब तो हम ढेर हो जाएंगे वहीं। फिर तो चलेंगे कैसे, उठेंगे कैसे? आशा का सूत्र टूट जाएगा तो सहारा टूट जाएगा। यह तो अंधे के हाथ की लकड़ी है यह आशा। यह छूट गयी तो फिर हम चलेंगे कैसे, उठेंगे कैसे? श्वास कैसे लेंगे, बोलेंगे कैसे? फिर तो मुश्किल हो जाएगी।

इससे हम डरते हैं। इससे हम समझाए रखते हैं। हम कहते हैं कि नहीं, अभी तक तो नहीं हुआ सच है, मगर कल होगा। कल के सहारे जिंदगी का तथ्य छिपा रहता है। मरने तक कोई सुख नहीं मिलता। बहुत बार लगता है अब मिला, अब मिला और चूक-चूक जाता है। बहुत बार लगता है, बस अब आ गए करीब, मंजिल बिलकुल करीब है, यह पड़ा पैर, फिर-फिर चूक जाता है। मंजिल सदा आगे-आगे बनी रहती है, मगर मिलती कभी भी नहीं।

क्षितिज की भांति है जीवन का सुख। दिखता है—वह रहा, थोड़ी दूर

मन और तृप्ति कहीं नहीं मिलते। मन का स्वभाव अतृप्ति है। तृष्णा और तृष्णा की तृप्ति का कभी कोई मिलन नहीं होता। तृष्णा में ही अतृप्ति है। तृष्णा का स्वभाव अतृप्ति है। बुद्ध ने कहा है, तृष्णा दुष्पूर है, उसे भरा नहीं जा सकता

और चल लें, दस मील होगा ज्यादा से ज्यादा, पहुंच जाएंगे, तुम जितने बढ़ते, उतना ही क्षितिज पीछे हट जाता। क्षितिज कहीं है थोड़े ही। जमीन और आकाश कहीं मिलते थोड़े ही। जमीन तो गोल है। मिलते मालूम होते हैं। मन और तृप्ति कहीं नहीं मिलते। मन का स्वभाव अतृप्ति है। तृष्णा और तृष्णा की तृप्ति का कभी कोई मिलन नहीं होता। तृष्णा में ही अतृप्ति है। तृष्णा का स्वभाव अतृप्ति है।

बुद्ध ने कहा है, तृष्णा दुष्पूर है, उसे भरा नहीं जा सकता।

एक फकीर ने एक सम्राट के द्वार पर भीख मांगी। संयोग की बात, सम्राट भी द्वार पर खड़ा था। उसने फकीर को कहा, क्या चाहता है? फकीर ने कहा, और कुछ नहीं चाहता, यह मेरा भिक्षापात्र है, इसे भर दो। सम्राट ने पूछा, काहे से भरना चाहता है—मजाक में रहा होगा—किस चीज से भर दूं? उस फकीर ने कहा, चीज कोई भी हो, मगर पूरा भरा हुआ पात्र लेकर जाऊंगा। अगर सम्राट हो और होने का कुछ दर्प है, चाहे मिट्टी से भर दो, मगर पूरा भर देना। खाली लेकर न जाऊंगा। छोटा सा पात्र लिए है। सम्राट हंसा, उसने अपने वजीर को कहा कि जाओ, हीरे-जवाहरातों से भर दो इसका पात्र, यह भी याद रखेगा किसी सम्राट से भीख मांगी थी!

वह फकीर खड़ा हंसता रहा। उसकी हंसी थोड़ी चोट भी करने लगी। उसके चेहरे पर बड़ा व्यंग्य था। और जब वजीर लाए, हीरे-जवाहरातों से उसका पात्र भरा, तब सम्राट को समझ आया कि झंझट हो गयी। वे हीरे-जवाहरात उसके पात्र में गिरे और खो गए, उसका पात्र खाली का खाली रहा।

एक बड़ी मीठी सूफी कथा है यह।

सम्राट तो पागल हो गया, उसने कहा कि चाहे सब लुट जाए, मगर पात्र भरना ही है। भीड़ लग गयी, सारी राजधानी इकट्ठी हो गयी, भागे लोग चले आ रहे हैं, गांवभर में खबर फैल गयी कि एक फकीर ने चुनौती दी है और सम्राट ने चुनौती स्वीकार कर ली है और पात्र भरता नहीं। हीरे-जवाहरात डाले गए, सोना-चांदी डाले गए, रुपए डाले गए, पैसे डाले गए, जो कुछ था सम्राट ने सब डाल दिया और पात्र खाली का खाली रहा। फिर तो हारा; पैरों पर गिर पड़ा और कहा, मुझे क्षमा करो, लेकिन जाते-जाते इतना बता दो, इस पात्र का राज क्या है?

उस फकीर ने कहा, समझे नहीं? यह पात्र साधारण पात्र नहीं है। यह आदमी के मन से बनाया गया है। यह आदमी के हृदय से निर्मित है। यह आदमी की तृष्णा से बनाया गया है। यह दुष्पूर है। इसे तुम भरते जाओ, यह खाली रहेगा। हंसना मत, क्योंकि कहानी बड़ी वास्तविक नहीं मालूम पड़ती, कहानी बिलकुल झूठी मालूम पड़ती है। मगर मैं तुमसे कहता हूं, सच है। और तुम्हारी कहानी है। तुम भी अपने भीतर के पात्र में कितना भरते चले गए हो, भरा? पहले सोचा दस हजार रुपए होंगे, वह हो गए एक दिन और तुमने पाया कुछ नहीं भरा। फिर सोचा लाख हो जाएं, वह भी हो गए एक दिन, फिर भी तुमने पाया पात्र नहीं भरा। दस लाख की सोचते थे, वह भी हो गए दिन...।

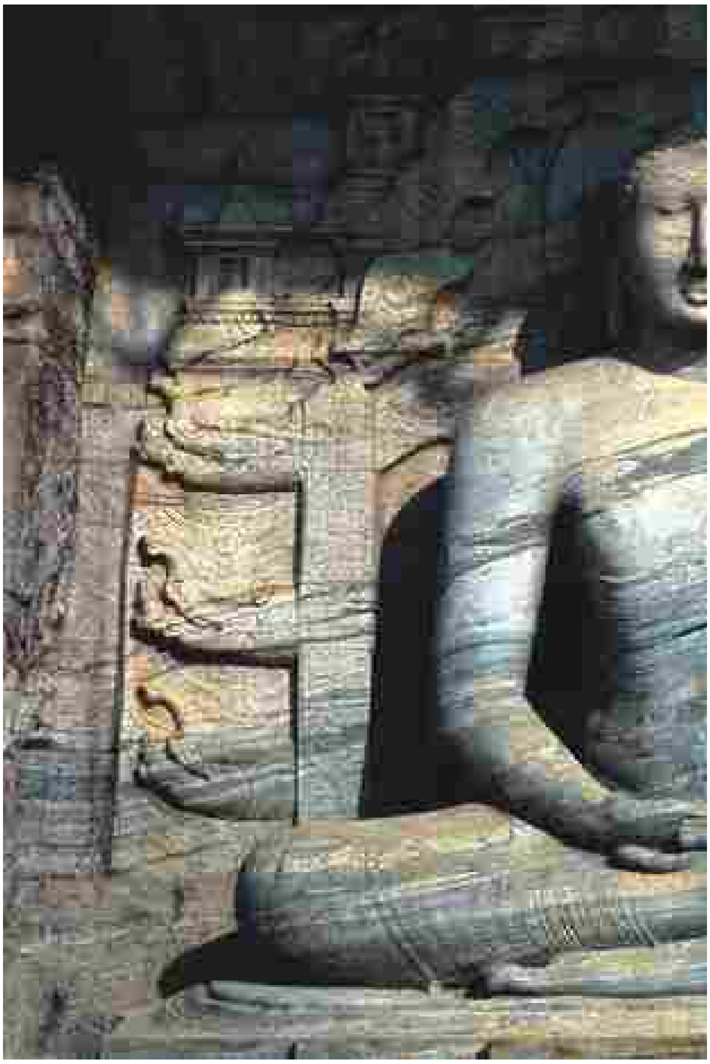

एंड्रू कारनेगी अमरीका का बड़ा अरबपति मरा, दस अरब रुपए छोड़कर मरा, लेकिन असंतुष्ट मरा। दस अरब! आदमी को तृप्त हो जाना चाहिए, अब और क्या चाहिए? लेकिन मरते वक्त किसी ने उससे पूछा कि कारनेगी, तुम तो संतुष्ट मर रहे होओगे, क्योंकि तुमने तो इतनी अपार राशि इकट्ठी की—और कारनेगी गरीब घर से आया था, बाप की तरफ से एक पैसा नहीं मिला था, खुद के ही बल से दस अरब रुपए छोड़कर गया—कारनेगी ने आंखें खोलीं और कहा, क्या बात कर रहे हो, मैं असंतुष्ट मर रहा हूं, क्योंकि मेरी योजना सौ अरब रुपए इकट्ठे करने की थी। दस अरब, क्या हल होता है! नब्बे अरब से हारकर मर रहा हूं।

कारनेगी भी हारा हुआ मरता है और सिकंदर भी हारा हुआ मरता है। और सब हारे हुए मरते हैं। यह कहानी बिलकुल सच है। यह कहानी बिलकुल झूठी मालूम पड़ती है और इससे सच कहानी खोजनी मुश्किल है।

यह तुम अपने भीतर खोजना तो तुम पाओगे। सोचते थे, यह स्त्री मिल जाए, यह पुरुष मिल जाए, सब तृप्ति हो जाएगी। बस, फिर तो एक स्वर्ग बसा लेंगे। फिर तो इस छोटे से झोपड़े में ही स्वर्ग बस जाएगा। वह स्त्री मिल गयी। अब फांसी लगी है और कुछ भी नहीं हो रहा है। सोचे थे एक बच्चा पैदा हो जाए, एक बेटा होगा तो घर में किलकारी होगी, हंसी-खुशी होगी, फूल झरेंगे। बेटा हो गया, अब सिर ठोंक रहे हैं। बूड़ा वंश कबीर का उपजा

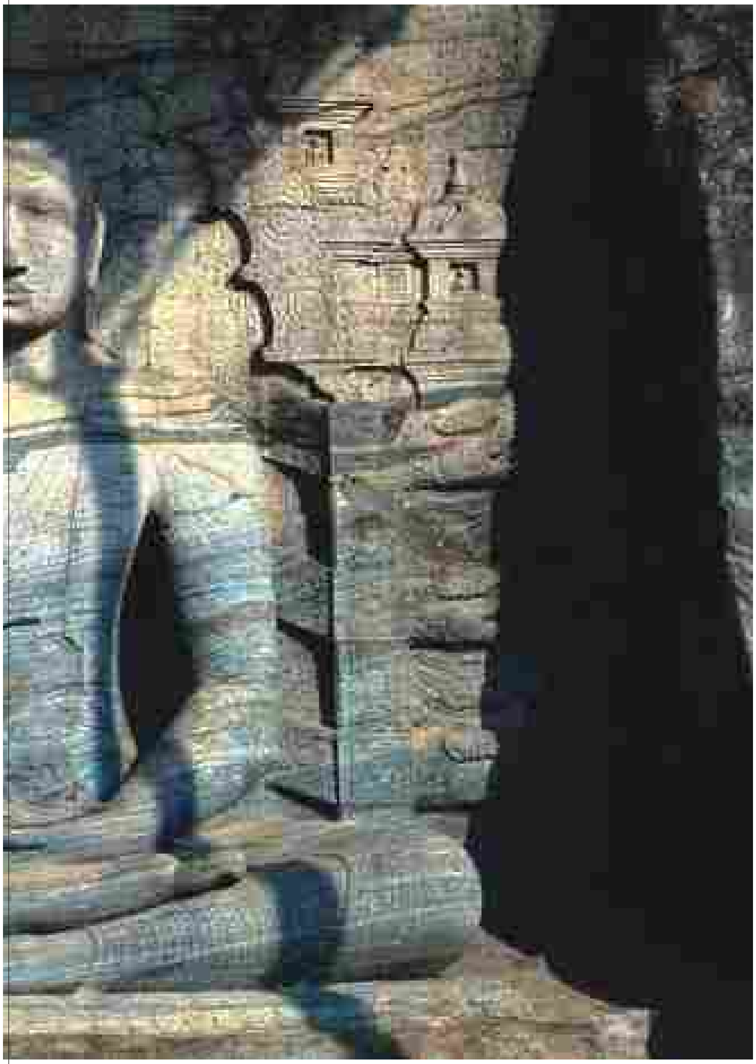

> तुम्हें भी जिस दिन दिखायी पड़ जाएगा कि जीवन वस्तुतः दुख है, उस दिन एक क्षण रुक न सकोगे। और बुद्ध अतिशयोक्ति नहीं करते हैं। बुद्धत्व में कहां अतिशयोक्ति! हमें अतिशयोक्ति लग सकती है

पूत कमाल। अब यह कमाल पैदा हो गए! अब इनके साथ झंझट चल रही है।

तुमने जो भी चाहा, वह अगर न हुआ, तब तो शायद भ्रम बना रहे कि हो जाता तो सुख मिलता, अगर हो गया तो भ्रम टूट गया। जो स्त्री तुम्हें नहीं मिली, वह अब भी सुंदर है और जो तुम्हें मिल गयी, उसका सारा सौंदर्य तिरोहित हो गया। धन्यभागी हैं वे प्रेमी जिनको उनकी प्रेयसी मिलती नहीं। इसलिए मजनू बड़े मजे में है। अभागे हैं वे प्रेमी जिनको उनकी प्रेयसी मिल जाती है। मिली नहीं कि सब खतम हुआ नहीं। जो तुमने चाहा, मिलते ही व्यर्थ हो जाता है, क्योंकि कुछ भरता नहीं, मन भरता ही नहीं। मन का भरना स्वभाव नहीं है।

जिस दिन तुम्हें यह दिखायी पड़ेगा, उस दिन तुम ऐसा न कहोगे कि बहुत दुख है, उस दिन तुम ऐसा कहोगे—जीवन दुख है।

ओ, हर सुबह जगाने वाले,
ओ हर शाम सुलाने वाले,
इतना दुख रचना था जग में
तो फिर मुझे नैन मत देता।
जिस दरवाजे गया, मिले
बैठे अभाव कुछ बने भिखारी
पतझर के घर गिरवी थी
मन जो भी मोह गयी फुलवारी,
कोई था बदहाल धूप में
कोई था गमगीन छांव में
महलों से कुटियों तक दुख की
थी हर सुख से रिश्तेदारी,
यूं चलती थी हाट कि बिकते
फूल, दाम पाते थे माली
दीपों से ज्यादा अमीर थी
उंगली दीप बुझाने वाली,
और यहीं तक नहीं, आड़
लेकर सोने के सिंहासन की
पूनम को बदचलन बताती
थी मावस की रजनी काली,
क्या अजीब थी प्यास कि
अपनी उमर पी रहा था हर प्याला
जीने की कोशिश में मरता
जाता था हर जीने वाला,
कहने को सब थे संबंधी
लेकिन थे आंधी के पत्ते
जब तक हों परिचित आपस में
मुरझा जाती थी हर माला,
ओ, हर चित्र बनाने वाले,
ओ, हर रास रचाने वाले,
झूठी थीं तस्वीरें सब तो
यौवन को दर्पण मत देता।
ओ, हर सुबह जगाने वाले,
ओ, हर शाम सुलाने वाले,
इतना दुख रचना था जग में
तो फिर मुझे नैन मत देता।

लेकिन मैं तुमसे कहता हूं, नैन हैं कहां? आंख है किसके पास इस दुख को देखने की? अगर ईश्वर ने आंख दी भी थी दुख को देखने की, तो तुमने उसे बंद कर रखा है। तुम डर से आंख खोलकर देखते नहीं। तुम उसी तर्क को मानते हो जिसको शुतुरमुर्ग मानता है। शुतुरमुर्ग का दुश्मन सामने आ जाता है तो वह रेत में सिर गड़ाकर खड़ा हो जाता है। उसका तर्क सीधा-साफ है, ठीक अरस्तू का तर्क है। वह तर्क यह है कि जो दिखायी नहीं पड़ता, वह है नहीं।

तुम भी तो यही तर्क मानकर चलते हो। मेरे पास लोग आ जाते हैं, वे कहते हैं, ईश्वर अगर है तो दिखलायी क्यों नहीं पड़ता? जो नहीं दिखायी पड़ता, वह नहीं है। वही तर्क शुतुरमुर्ग का है। वह आंख बंद कर लेता है, रेत में सिर गपा लेता है, दुश्मन सामने खड़ा है, दिखायी नहीं पड़ता उसको; नहीं दिखायी पड़ता तो सोचता है, है नहीं। निश्चिंत हो गया।

ऐसे ही हमने जीवन के सत्यों से आंखें छिपा ली हैं। सामने खड़ा है जीवन सारे दुख का अंबार लिए, हम जीवन को देखते ही नहीं, हम आगे देखते हैं। हम सपनों में देखते हैं, हम कल्पनाएं रचते हैं, हम सपने रचते हैं।

गुरजिएफ कहा करता था—और ठीक थी उसकी बात—कि जैसे रेल के दो डिब्बों के बीच में बफर लगे होते हैं, बफर का काम होता है कि अगर कभी जोर का धक्का लगे तो यात्रियों को धक्का न लग जाए, बफर धक्के को पी जाते हैं। या जैसे कार के नीचे स्प्रिंग लगे होते हैं, गड्ढा भी आ जाए तो स्प्रिंग कार के धक्के को पी जाते हैं, अंदर बैठे यात्री को थोड़ा-बहुत हलन-चलन होती है, लेकिन धक्का नहीं लगता। फिर जितनी अच्छी गाड़ी हो, उतने ही अच्छे स्प्रिंग होते हैं। जितनी महंगी गाड़ी हो, उतने ही अच्छे स्प्रिंग होते हैं। स्प्रिंग का अर्थ ही यह है कि वह जो चोटें आती हैं, धक्के आते हैं, उनको पी जाएं, तुम तक न पहुंचने दें।

सपने हमारे बफर हैं। सपनों के कारण जीवन के धक्के हम तक नहीं पहुंच पाते। सपना पी जाता है धक्का। हमारे और जीवन के बीच सपनों की एक दीवाल है। उधर जीवन है, वह चोटें करता जाता है और हम सपने देखते चले जाते हैं। हम सपनों में रहते हैं, हम जीवन में रहते कहां हैं! इसलिए हमें दिखायी नहीं पड़ता कि जीवन दुख है। और जिसे यह नहीं दिखायी पड़ता कि जीवन दुख है, वह महाजीवन में प्रवेश न कर सकेगा।

जब यह तुम्हें रत्ती-रत्ती सौ प्रतिशत सिद्ध हो जाएगा कि जीवन दुख है, खालिस दुख है, दुखमात्र है, दुख और जीवन पर्यायवाची हैं, जिस दिन ऐसा साक्षात्कार हो जाएगा, उसी दिन तुम जगोगे—उस दिन जगना ही पड़ेगा।

अभागे हैं वे प्रेमी जिनको उनकी प्रेयसी मिल जाती है। मिली नहीं कि सब खतम हुआ नहीं। जो तुमने चाहा, मिलते ही व्यर्थ हो जाता है, क्योंकि कुछ भरता नहीं, मन भरता ही नहीं। मन का भरना स्वभाव नहीं है

बुद्ध के पास एक आदमी आया और उसने कहा, आप कहते हैं तो ठीक ही कहते होंगे कि जीवन दुख है। बुद्ध ने कहा, रुक! मेरे कहने से जीवन दुख नहीं हो सकता। मेरे कहे को तू मान ले तो भी जीवन दुख नहीं हो सकता। तू कहता है, आप कहते हैं तो ठीक ही कहते होंगे। तेरे कहने ही से जाहिर है कि तू राजी नहीं है मेरी बात से। नहीं, उस आदमी ने कहा, जब आप जैसे पुरुष कहते हैं तो ठीक ही कहते होंगे।

यह सवाल बुद्ध के कहने का नहीं है, यह सवाल तुम्हारे देखने का है। तो बुद्ध ने कहा, ठीक, अगर तुझे लगता है कि हम जो कहते हैं ठीक ही कहते हैं, तो अब छोड़, दुख को कब तक पकड़े रहेगा? उसने कहा, अभी नहीं; आऊंगा, जरूर आऊंगा, आना ही है आपके मार्ग पर, अंततः तो सभी को आना है, लेकिन अभी नहीं। बुद्ध ने कहा, अगर तेरे घर में आग लगी हो और तुझे दिखायी पड़ता हो कि लपटें उठने लगी हैं और घर जलने लगा, तो तू उसी वक्त दौड़कर बाहर निकल जाएगा कि सोचेगा कि जाऊंगा, जरूर जाना तो है ही; सभी भाग रहे हैं, मैं भी भागूंगा, मगर अभी नहीं? उस आदमी ने कहा, आप भी क्या बातें कर रहे हैं! घर में आग लगी हो तो सोचने की फुरसत कहां, आदमी निकल जाता है बाहर। बुद्ध ने पूछा, तू किसी से पूछेगा, कहां से निकलूं? दरवाजे से, खिड़की से, पीछे के दरवाजे, आगे के दरवाजे से, कि कूद जाऊं छत से, कि छज्जे से, पूछेगा किसी से? वह कहने लगा, आप भी कैसी बातें कर रहे हैं, घर में आग लगी हो तो कोई पूछता है? जहां से मिल जाए द्वार वहां से आदमी निकल जाता है।

बुद्ध ने कहा, ऐसा ही जिस दिन तुझे जीवन का सत्य दिखायी पड़ेगा, तू एक क्षण भी टाल न सकेगा। निकल जाएगा। रुका ही नहीं जा सकता!

जिस दिन बुद्ध ने अपना महल छोड़ा, जो सारथी उन्हें ले गया गांव के बाहर छोड़ने, वह बूढ़ा सारथी था, बुद्ध का पुराना सेवक था, बचपन से बुद्ध को देखा था, बुद्ध बेटे की तरह थे उस बूढ़े के। जब बुद्ध वहां उससे कहे कि तू अब वापस लौट जा रथ को लेकर, यह मेरे गहने भी तू ले जा, तेरी भेंट, तुझे पुरस्कार; ये मेरे कपड़े भी तू ले ले, क्योंकि अब इनकी मुझे कोई जरूरत न होगी; और जब उन्होंने अपने बाल काटने शुरू किए तो उसने कहा, आप यह क्या कर रहे हैं? उन्होंने कहा, ये बाल भी तू ले जा,

फकीर हो रहा हूं। वह बूढ़ा समझाने लगा कि बेटा, रुक, आखिर मैं भी तेरे पिता की उम्र का हूं और मैंने तुझे बचपन से बड़ा किया है, यह तू क्या कर रहा है? ऐसे सुंदर राजमहल को, ऐसी सुंदर पत्नी को, ऐसे सुंदर अभी-अभी पैदा हुए बेटे को छोड़कर तू कहां जा रहा है, तू होश में है? एक बार लौटकर तो देख!

बुद्ध ने कहा, मैं बहुत बार लौटकर देखता हूं, लेकिन लपटों के सिवाय मुझे वहां कुछ भी नहीं दिखायी पड़ता, मेरा भवन जल रहा है। उस बूढ़े ने कहा, मुझे तो कहीं कोई लपटें नहीं दिखायी पड़ रही हैं।

बुद्ध ने कहा इस आदमी को कि अगर तुझे लपटें दिखायी पड़ जाएं, तो फिर तू रुकेगा नहीं, फिर स्थगित न करेगा। स्थगित करने की तो तभी तक संभावना है जब तक लपटें दिखायी नहीं पड़ीं।

तुम्हें भी जिस दिन दिखायी पड़ जाएगा कि जीवन वस्तुतः दुख है, उस दिन एक क्षण रुक न सकोगे। और बुद्ध अतिशयोक्ति नहीं करते हैं। बुद्धत्व में कहां अतिशयोक्ति! हमें अतिशयोक्ति लग सकती है, क्योंकि हमें लगता है कि इतने तक बात ठीक है कि जीवन में दुख हैं, चलो यह भी कहो कि बहुत हैं, मगर दुख ही दुख हैं! यह हमें बात घबड़ाती है, यह हम स्वीकार नहीं करना चाहते; कहीं तो सुख होगा, कुछ तो सुख होगा!

हां, सुख है, आशा में। घटना में कभी भी नहीं। भविष्य में, वर्तमान में कभी भी नहीं। सुख है, सपने में। और उसी सपने में लिपटे हम इस दुख को झेल रहे हैं, इस दुख की चोट नहीं पड़ पाती।

सपना तोड़ दें हम, तो दुख की चोट हमें जगा देगी। दुख की चोट ही मनुष्य को बुद्धत्व की यात्रा पर ले जाती है।

– ओशो
एस धम्मो सनंतनो, भाग–8
प्रवचन–78, तीसरा प्रश्न
(पूरा प्रवचन टेप पर भी उपलब्ध है)

मैं फिर से पाक हुई

कुछ अर्सा हुआ, मुझे अपनी ख़ुशबू
फिर से आने लगी
पुरानी ठंडी धूप
फिर से भाने लगी
अन्दर ही अन्दर
नए अंकुर फूट रहे हैं
और ढेर सारे फूल
धूप को सूंघ रहे हैं
अपनी मख़मली आंखों से जब
वे फूल देखते हैं मेरी ओर
कई नए सूरज खिल उठते हैं
मेरी अंतर आत्मा में ...
और पूर्णिमा का चांद
दोबारा करता वादा है
एक ऐसे हसीन ख़्वाब का
छूना तो जिसे दूर
टकटकी लगाने पर ही
कुछ मैला सा हो जाता है–
अब श्वेत चांद कर चुका है घर
मेरे श्वेत-स्वच्छ आंगन में
और मैं उसकी किरणों में घुली
ग़म और खुशी से आगे बढ़ी
एक बार फिर से पाक़ हुई
एक बार फिर से पाक़ हुई।

– लवलीन
(मा लवलीन ओशो की शिष्या हैं,
अति संवेदनशील-सृजनशील कवयित्री, लेखिका
एवं फिल्मों की सर्जक हैं)